लोकनायक - संत कबीर

-डॉ. शंभु नाथ राणा
एम.ए., पी-एच.डी.

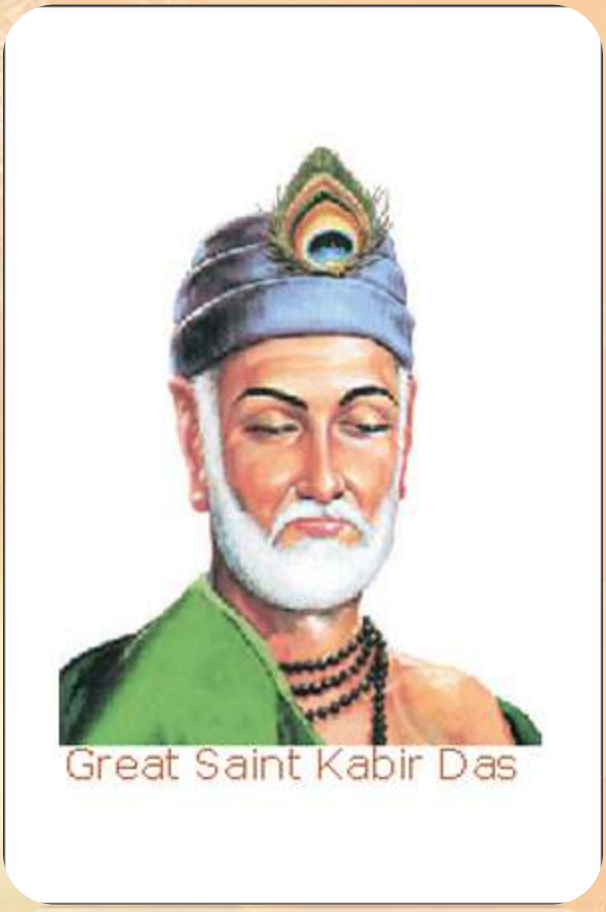

'भारतीय धर्म साधना के इतिहास में कबीर दास ऐसे महान विचारक एवं प्रतिभाशाली महाकवि हुए है। जिन्होंने शताब्दियों की सीमा का उल्लंघन कर दीर्घ काल तक भारतीय जनता का पथ आलोकित किया और सच्चे अर्थों में जन-जीवन का नायकत्व किया। रामानन्द के प्रमुख शिष्यों में से एक थे सन्त कबीर। कबीर सन्तमत के केन्द्रीय चरित्र थे। संतमत का आरम्भ कबीर से माना जा सकता है।

कबीर की उत्पत्ति के संबंध में अनेक प्रकार के प्रवाद प्रचलित हैं, काशी में स्वामी रामानन्द का एक भक्त ब्राह्मण जिसकी विधवा कन्या को स्वामी जी ने पुत्रवती होने का आशीर्वाद भूल से दे दिया। फल यह हुआ कि उसे एक बालक उत्पन्न हुआ जिसे वह लहरतारा के ताल के पास फेंक आई। अली या नीरू नाम का जुलाहा उस बालक को अपने घर उठा लाया और पालने लगा। यही बालक आगे चलकर कबीरदास हुआ। कबीर का जन्मकाल जेठ सुदी पुर्णिमा, सोमवार, विक्रम संवत् 1456 माना जाता है। कहते हैं कि आरंभ से ही कबीर में हिन्दू भाव से भक्ति करने की प्रवृत्ति लक्षित होती थी जिसे उसके पालने वाले माता पिता न दबा सके। वे राम-राम जपा करते थे और कभी-कभी माथे में तिलक भी लगा लेते थे। उस समय में स्वामी रामानन्द का प्रभाव खूब बढ़ रहा था और छोटे बड़े ऊँचे नीच सब तृप्त हो रहे थे। अत: कबीर पर भी भक्ति का यह संस्कार बाल्यावस्था से ही पड़ने लगा था। रामानन्द जी के महात्म्य को सुनकर कबीर के हृदय में उनके शिष्य होने की लालसा जगी होगी।

ऐसा प्रसिद्ध है कि एक दिन वे एक पहर रात रहते ही उस (पंचगंगा) घाट की सीढ़ियों पर जा पड़े जहाँ से रामानन्द जी स्नान करने के लिए उतरा करते थे। स्नान को जाते समय अँधेरे में रामानन्द जी का पैर कबीर के ऊपर पड़ गया।

रामानन्द जी चट बोल उठे 'राम राम कह'। कबीर ने इसी को गुरु मंत्र मान लिया और वे अपने को रामानन्द जी का शिष्य कहने लगे। वे साधुओं का सत्संग भी रखते थे और जुलाहे का काम भी करते थे।

पन्द्रहवीं शताब्दी में कबीर सबसे शक्तिशाली और प्रभावोत्पादक व्यक्ति थे। संयोग से ऐसे युग-संधि के समय उत्पन्न हुए थे, जिसे हम विविध धर्म साधनाओ और मानोभावों का चौराहा कह सकते हैं। उन्हें सौभाग्यवंश संयोग भी अच्छा मिला था। वे मुसलमान होकर भी मुसलमान नहीं थें। वे साधु होकर भी साधु (अगृहस्थ) नहीं थे। वैष्णव होकर भी वैष्णव नहीं थे। वे योगी होकर भी योगी नहीं थें। वे कुछ भगवान की ओर से ही नरसिंहावतार की मानो प्रतिमूर्ति थे। नरसिंह भगवान की भाँति नाना असंभव समझी जाने वाली परिस्थितियों के मिलन-बिन्दु पर अवतीर्ण हुए थे।

कबीरदास ऐसे ही मिलन विन्दु पर खड़े थे, जहाँ से एक ओर हिन्दुत्व निकल जाता है और दूसरी ओर मुसलमानत्व; जहाँ एक ओर ज्ञान निकल जाता है दूसरी ओर अशिक्षा; जहाँ एक ओर योग मार्ग निकल जाता है, दूसरी ओर भक्तिमार्ग; जहाँ से एक ओर निर्गुण भावना निकल जाती है दूसरी ओर सगुण साधना! डसी प्रशस्त चौरहे पर वे खडे थे। वे दोनों और देख सकते थे और परस्पर विरूद्ध दिशा में गए मार्गों के दोष-गुण उन्हें स्पष्ट दिखयी दे जाते थे। वह कबीर दास का भगवद् दत्त सौभाग्य था, उन्हों ने इसका खूब उपयोग किया।

कबीर में एक प्रकार की घर फूँक मस्ती और फक्कड़ाना लापरवाही के भाव मिलते हैं। उनमें अपने-आप के ऊपर अखण्ड विश्वास था। उन्होंने कभी भी अपने ज्ञान को, अपने गुरू को अपनी साधना को सन्देह की दृष्टि से नहीं देखा। वे जब पण्डित या शेख पर आक्रमण करने को उद्यत होते हैं तो इस प्रकार पुकारते हैं मानो वे नितान्त नगण्य जीव हो; केवल बाह्यचारों के गड्डर, केवल कुसंस्कारों के गुड्डे। साधारण हिन्दू गृहस्थ पर आक्रमण करते समय लापरवाह रहते हैं। और इस लापरवाही के कारण ही उनके आक्रमण मूलक पदों में एक सहज सरल भाव और एक जीवन्त काव्य मूर्तिमान हो उठा है। यही लापरवाही कबीर के व्यंग्यों की जान है।

कबीर दास मुख्य रूप से भक्त थे। वे उन निरर्थक आचारों को व्यर्थ समझते थे, जो असली बात को ढंक देते है और झुठी बातों को प्राधान्य देते हैं। उनके प्रेम के आदर्श सती और शूर हैं। जो प्रेम या भक्ति पद पर भक्त को भाव विहव्ल कर देती है। मन और बुद्धि का मंथन करके मनुष्य को परवश बना देती है और जो उन्मत भावावेश के द्वारा भक्त को हत चेतन बना देती है, वह कबीर को अभीष्ट नहीं। प्रेम के क्षेत्र में वह गतद्श्रु भावुकता को कभी बर्दास्त नहीं करते । बड़ी चीज का मूल्य

भी बड़ा होता है। भगवान जैसे प्रेमी को पाने के लिए भी मनुष्य को बड़े से बड़ा मूल्य चुकाना पड़ता हैं। और अपने आपा के देने से बढ़कर मनुष्य और कौन सा मूल्य चुका सकता हैं? तभी तो कबीर कहते है-

"यह तो घरू है प्रेम का, खाला का घरू नाहिं। सीस उतारे भुई धरे, जो पइठे इति मांहिं।।"

कबीर सच्चे सहज मार्गी हुए क्योंकि गृहस्थ जीवन का उन्होंने तिरस्कार नहीं किया, क्योंकि आडम्बर, बाह्ययाचार और लोगों को ठगने की विद्या का उन्होंने आश्रय नहीं लिया और अपना कौटुम्बिक दायित्व निभाते हुए भी उन्होंने अपने को मानवता के ऊँचे नमूनों में परिवर्तित कर दिया। सहज मार्ग कबीर के समय प्रचलित था और उसके निन्दितरूप को भी कबीर जानते थे। इसलिए सहज को व्याख्या करते हुए उन्होंने कहा है-

सहज सहज सब कोई कहे, सहज न चीन्है कोई, जिन सहजे विषया तजी, सहज कहावे सोई।
सहज सहज सब कोई कहै सहज न चीन्है कोई, जिन सहजै हरि मिलै, सहज करी गै सोई।
इसी प्रकार हठयोग पर राजयोग की श्रेष्ठता प्रतिपादित करते हुए कबीर दास ने कहा कि-
साधो, सहज समाधि भली, गुरु प्रताप जा दिन ते लगी,

जुग जुग अधिक चली। जहँ जहँ डोलूँ, सो परिचर्या, जो जो करूँ सो पूजा।

कबीर ने बार-बार इस्लाम और हिन्दु दोनों धर्मों के बाह्यचारों का खण्डन किया और बार बार वे जनता का ध्यान इस बात की ओर ले गए कि धर्म का वास्तविक संबंध जिन मूल तत्वों से है वे तत्व किसी एक धर्म की पूँजी नहीं है।
उनका निवास सभी धर्मों में है। इस प्रक्रिया में उन्होंने मूर्तिपूजा और मस्जिद की संस्था पर बड़े गहरे वार किए।

'पंडित! बद बदौं सो झूठा।
जनेउ पहिरि बाहमन जो होना मेहरी को क्या पहराया, वो जनम की सूद्रिन परसे तु पाँडे क्यों खाया सुन्न्त करि मुस्लिम जो होना, औरत को क्या कहिए, अरध सरीरी नारि बरवानी ताती हिन्दु रहिए।

ज्ञान मार्ग की बातें कबीर ने हिन्दू साधु सन्यासियों से ग्रहण की जिनमें सूफियों के सत्संग से उन्होंने प्रेमतत्व का मिश्रण किया और अपना एक अलग पंथ चलाया। उपासना के वाह्यस्वरूप पर आग्रह करने वाले और कर्मकाण्ड को प्रधानता देने वाले पंडितों और मुल्लों दोनों को उन्होंने खरी-खरी सुनाई ओर राम रहीम की एकता समझाकर हृदय को शुद्ध और प्रेममय करने का उपदेश दिया। देशाचार और

उपासना विधि के कारण मनुष्य में जो भेदभाव उत्पन्न हो जाता है उसे दूर करने का प्रयत्न इनकी वाणी बराबर करती रही । यद्यपि वे पढ़े लिखे न थे पर उनकी प्रतिभा बड़ी प्रखर थी जिससे उनके मुँह से बड़ी चुटीली ओर व्यंग्य-चमत्कारपूर्ण बातें निकलती थीं। कबीर के इस पद में देखा जा सकता है-

है कोई गुरुज्ञानी जगत महँ उलटी वेद बूझै।
पानी महँ पावक धरै, अंधहि आँखिन्ह सूझै।।
गाय को नाहर धरि खायो, हरिना खायो चीता।

वस्तुत: कबीर संत सम्प्रदाय के प्रमुख स्तंभ थे अतएव उनकी वाणी में संत संप्रदाय की उन्नत एक अखिल ब्रह्माण्ड का अचूक दर्शन होता है। कबीर के पदों में यह स्पष्ट लक्षित होता है कि सन्त सम्प्रदाय विश्व संप्रदाय है और उसका धर्म विश्व धर्म! इस विश्व धर्म का मूलाधार है - हृदय की पवित्रता।

पवित्रता सम्मत स्वाभाविक और सात्विक आचरण ने ही यहाँ धर्म का वृहत्रूप ग्रहण किया। समस्त वासनाओं इच्छाओं एवं द्वेषों से रहित हृदय की नि:सीम सीमाओं में विशाल धर्म का प्रवेश और समावेश सम्भव है। यह सब सद्गुरू की कृपा की से ही संभव है। वह भक्ति का दाता तथा ज्ञान चक्षुओं का उद्घाटक है। सन्त सम्प्रदाय में गुरु को ब्रह्म से भी महान माना गया है। इसीलिए कबीर ने कहा है:

'गुरु गोविन्द दोऊ खडे काके लागूं पाँय बलिहारी गुरु आपने गोविन्द दियो बताय।।